एड्स वायरसः एक उलझा हुआ रहस्य

डॉ. भोलेश्वर दुबे

संसार के सभी जीवों का एक निश्चित जीवन चक्र होता है जिसके तहत उनकी वृद्धि, विकास, जनन और अंत में मृत्यु होती है। किंतु यदि यह चक्र किसी प्रकार बाधित होता है तो जीवन का क्रम विचलित हो जाता है। ऐसे में जीवन की क्रियाविधि असामान्य हो जाती है। मनुष्यों का जीवन भी इन्हीं नियमों के अनुसार चलता है। किंतु विभिन्न प्रकार के रोग जैविक क्रियाओं को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं। ठीक ही कहा गया है कि 'पहला सुख नीरोगी काया', किंतु विभिन्न रोग कारकों और सूक्ष्म जीवों के बीच मानव का स्वस्थ बने रहना टेढ़ी खीर है।

चिकित्सा विज्ञान के विकास के साथ ही रोगों के उपचार की विधियां भी विकसित हुईं । कई बीमारियों का उपचार तो लाक्षणिक आधार पर ही सम्भव हो गया, किंतु वायरस जन्य रोगों से मुक्ति इतनी आसान नहीं रही। आज से कई दशक पूर्व चेचक महामारी के रूप में जानी जाती थी। पागल कुत्ते के काटने पर होने वाली रेबीज़ भी लाइलाज़ थी। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति की मृत्यु निश्चित मानी जाती थी। इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी की खोज व आधुनिक शोध विधियों के द्वारा ही विषाणु के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त हुई।

कई वर्षों तक सामान्य सर्दी-जुकाम से लगाकर डेंगू, हिपेटाइटिस, पोलियो, छोटी माता, मीज़ल्स, मम्स, चेचक को दैवी प्रकोप माना जाता था। चिकित्सा विज्ञान व सूक्ष्म जैविकी के विकास और शोध के माध्यम से इन रोगों के कारक वायरस यानी विषाणुओं की जानकारी मिली। इससे इन रोगों का इलाज संभव हुआ। किंतु कैंसर जैसी कुछ बीमारियों का उपचार अब तक नहीं खोजा जा सका है। कैंसर का उपचार ढूंढने में वैज्ञानिक व्यस्त थे तभी एक और भयानक बीमारी की पदचाप चिकित्सा वैज्ञानिकों ने सुनी। यह रोग और कोई नहीं मानवजाति के लिए अभिशाप एड्स था।

ऐसा माना जाता है कि एड्स की शुरुआत मध्य अफ्रीका से हुई। एड्स के ये वायरस हैटी से होते हुए अमेरिका पहुंचे। इसके बाद तो विश्व के अनेक देशों में यह रोग फैल गया । अनुमान है कि 1993 में विश्व भर में लगभग एक करोड़ चालीस लाख व्यक्ति इस रोग से ग्रसित थे, जबकि यही संख्या सन 2000 में लगभग चार करोड़ तक पहुंच गई। यह रोग जिस गति से फैल रहा है वह निश्चय ही चिंता का विषय है। यह रोग अफ्रीका और अमेरिका के अतिरिक्त भारत, चीन, वियतनाम, कम्बोडिया, मध्य और पूर्वी यूरोप के कई देशों और रूस में भी द्रुत गति से फैल रहा है। 1980 के पूर्व तक यह रोग अज्ञात था किंतु कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रतिरक्षा वैज्ञानिक माइकल गोटलिब ने चिकित्सालय में भर्ती चार रोगियों में अति विशिष्ट चौंकाने वाले लक्षण देखे जो कि इसके पूर्व कभी किसी रोगी में नहीं पाए गए थे। संयोग से ये चारों रोगी समलैंगिक थे। इन चारों रोगियों में श्वेत रक्त कणिकाओं की बहुत कमी हो गई थी तथा इनके ऊतकों में *सायटोमेगालो* वायरस पाया गया। अतः ऐसा माना जाने लगा कि यह अज्ञात बीमारी *सायटोमेगालो* वायरस द्वारा हुई होगी। 1983 में अमेरिका में रॉबर्ट गेलो के मार्गदर्शन में कुछ व्यक्ति इस अज्ञात रोग पर काम कर रहे थे। उधर पेरिस स्थित पाश्चर इंस्टीट्यूट के लक मोन्टेगनेर अपने साथियों के साथ इस पहेली को सुलझाने हेतु प्रयासरत थे। अमेरिका और फ्रांस दोनों के शोध समूहों ने इस बीमारी के कारक वायरस को ढूंढ निकाला। फ्रांसिसी वैज्ञानिकों ने इसे L.A.V. (Lympho Adenopatny Associated Virus) नाम दिया क्योंकि इस बीमारी में लिम्फ नोड (लसिका ग्रंथियां) फूलने के प्रारम्भिक लक्षण दिखाई देते हैं। अमेरिकी टीम ने इसका नामकरण HTLV-3 (Human T-cell limphotrophic virus) किया । किंतु 1986 में अंतर्राष्ट्रीय विषाणु वर्गीकरण समिति ने इसे HIV (Human Immuno-deficiency Virus) नाम प्रदान किया तथा इस रोग को AIDS (Ac-

quired Immuno Deficiency Syndrom) का नाम मिला।

इस वायरस का आकार अत्यन्त सूक्ष्म है। इसके बाहरी भाग में प्रोटीन और ग्लायको-प्रोटीन का आवरण होता है जो अपने अंदर एकल सूत्रीय RNA के रूप में अनुवांशिक पदार्थ को सुरक्षित रखता है। यह रिट्रो-वायरस समूह का सदस्य है।

AIDS रोग में मनुष्य का प्रतिरक्षा तंत्र सर्वाधिक प्रभावित होता है। ये वायरस मानव कोशिका में प्रवेश कर गुणन करते हैं और अपने जैसे कई अन्य वायरस का निर्माण करते हैं। इस विषाणु का गुणन मुख्यतः रक्षक कोशिकाओं में होता है। इस प्रकार ये रक्षक कोशिकाएं बाहरी रोग जनकों से लड़ने में असमर्थ हो जाती हैं। इसलिए शरीर का प्रतिरक्षा तंत्र छिन्न-भिन्न हो जाता है। ऐसी स्थिति में रोगी अन्य विभिन्न रोगों की चपेट में आने लगता है। HIV मानव रक्त तथा शारीरिक द्रवों में भलीभांति वृद्धि करता है। इस रोग के फैलने में रक्त की महत्वपूर्ण भूमिका है, अतः इसे रक्त वाहित या प्रजनन वाहित रोग के रूप में भी जाना जाता है। मनुष्यों में इस रोग के फैलने का एक तरीका यह है कि समलैंगिक व विषम लैंगिक प्रजनन के दौरान वायरस संक्रमित व्यक्ति से किसी स्वस्थ महिला या पुरुष में पहुंचते हैं और रोग की शुरुआत करते हैं। अस्सी के दशक में इस रोग के सर्वाधिक वाहक समलैंगिक थे। किंतु अब यह रोग सभी में भी तेज़ी से फैल रहा है।

इस रोग के संचरण का दूसरा महत्वपूर्ण कारण रक्त का आदान-प्रदान भी है। HIV वाहक व्यक्ति का रक्त स्वस्थ मनुष्य को प्रदान करने अथवा विषाणु संक्रमित सुई के उपयोग से भी यह रोग फैलता है। न्यूयॉर्क में नशीली दवाई का उपयोग करने वाले लगभग ढाई लाख व्यक्तियों में से 60 प्रतिशत लोग HIV ग्रस्त पाए गए हैं। संक्रमित सुई तथा इंजेक्शन का उपयोग इसका प्रमुख कारण रहा है। स्वस्थ व एड्स रोगी व्यक्ति के रिसते घावों के सम्पर्क से भी यह रोग फैलता है।

संक्रमित महिला का गर्भस्थ शिशु भी संक्रमित हो सकता है। बच्चे को यह रोग गर्भ में ही माता से प्राप्त होने वाले पोषण अथवा जन्म के बाद प्राप्त दूध के द्वारा पहुंचता है। HIV संक्रमित माता से बच्चे को एड्स होने की संभावना 25 से 50 प्रतिशत तक रहती है।

T-4 प्रतिरक्षा कोशिकाओं से वायरस के सम्बंध स्थापित होने पर संक्रमण की शुरुआत हो जाती है। यहां से यह वायरस लिम्फोसाइट कोशिका की बाहरी झिल्ली को भेदते हुए अपना अनुवांशिक पदार्थ (आरएनए) कोशिका में पहुंचा देता है। इस अनुवांशिक जानकारी की प्रतिलिपि रिवर्स ट्रान्सक्रिप्टेस एंज़ाइम की सहायता से डीएनए के रूप में बना ली जाती है। यह डीएनए लिम्फोसाइट कोशिका के नाभिक में पहुंच कर उसका अविभाज्य अंग बन जाता है। अब कोशिका विभाजन के समय विषाणु का अनुवांशिक पदार्थ भी विभाजित होता है और नई कोशिकाओं में पहुंचता रहता है। वायरस का यह डीएनए मानव शरीर में लगभग 6 वर्ष तक सुप्त अवस्था में रहता है। इस अवधि को सुप्त अवधि कहते हैं।

अचानक संक्रमित लिम्फोसाइट वायरस का डीएनए प्रोटीन का निर्माण करने लगता है जिससे असंख्य नए वायरस बनने लगते हैं। ये नए वायरस लिम्फोसाइट कोशिका से मुकुलन के द्वारा मुक्त होने लगते हैं और नई-नई कोशिकाओं का अपना शिकार बनाने लगते हैं जिससे संक्रमण बढ़ता है और वे कोशिकाएं नष्ट होने लगती हैं जिनमें वायरस का गुणन हुआ हो।

एड्स के रोगी की पहचान चार चरणों में की जा सकती है। प्रथम चरण में संक्रमण के तत्काल बाद रोगी के शरीर में प्रतिरक्षा इकाइयों (एन्टी बॉडी) का निर्माण होता है। ऐसी अवस्था में रोगी में फ्लू जैसे लक्षण पाए जाते हैं। रोगी के शरीर पर बारीक फुंसियां उभर आना तथा लसिका ग्रंथियों का फूलना प्रमुख है। इन लक्षणों का सामान्यतः उपचार सम्भव है।

दूसरा चरण HIV एण्टीबॉडी पॉज़िटिव अवस्था कहलाती है। यह वह अवधि होती है जिसमें संक्रमण की शुरुआत से लेकर प्रारंभिक चिकित्सकीय लक्षण प्रकट होने लगते हैं। यह अवधि कुछ सप्ताह से लगाकर 13 से अधिक वर्ष तक हो सकती है।

तीसरा चरण एड्स सम्बंधी संकुल (ए.आर.सी.) के

रूप में जाना जाता है। इसमें कोई भी सामान्य जीवाणु, वायरस, कवक-जन्य संक्रमण हो जाता है, जो लम्बे समय तक बना रहता है। यह सामान्य उपचार से ठीक नही होता। ऐसे रोगियों में मुखगुहा तथा जननांगों का हर्पीस रोग भी प्रायः देखा गया है। रोगी के शरीर का वज़न एकदम घट जाता है। उनके प्रतिरक्षा तंत्र की टी-हेल्पर कोशिकाओं में भी आश्चर्यजनक कमी हो जाती है। इस अवस्था में रोगी को विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है क्योंकि इसी स्थिति में रोग पूरी तरह से सामने आता है।

चौथे चरण में सूक्ष्मजीव संक्रमण और बढ़ जाते हैं। साथ ही शरीर के विभिन्न अंगों में कई रोग तथा द्वितीयक कैंसर की शिकायत सामान्य है। अन्ततः रोगी में एच.आई.वी. क्षय के लक्षण नज़र आने लगते हैं। अर्थात आहार नाल के कैंसर, पोषण की कमी तथा चयापचयी प्रक्रियाओं की गड़बड़ी तथा सूक्ष्मजीवों के संक्रमण होने लगते हैं तथा इनसे जूझते हुए उसे काल के गाल में समाना ही पड़ता है।

सूक्ष्म जैविकी तथा चिकित्सा विज्ञान में हुए आधुनिक शोध के द्वारा रक्त के नमूने की जांच से प्रारंभिक अवस्था में ही एड्स का पता लगाया जा सकता है। किंतु कई बार एड्स का टेस्ट नकारात्मक होने के बावजूद व्यक्ति एड्स से पीड़ित हो सकता है, क्योंकि ये वायरस लम्बे समय तक अपनी उपस्थिति को छुपाए रखने में माहिर हैं। फिर अचानक प्रकट होकर रोगी के बचने की कोशिशों को नाकाम कर देते हैं।

एड्स एक विषाणु जन्य रोग है। अतः इसका उपचार अपेक्षाकृत मुश्किल है। जीवाणु तथा कवक-जन्य रोगों का उपचार तो एन्टीबॉयोटिक्स के माध्यम से सम्भव है किंतु वायरस के लिए कोई एन्टीबॉयोटिक उपलब्ध नहीं है। अभी जो भी उपचार किया जाता है वह लक्षणों के आधार पर द्वितीयक संक्रमण से मुक्ति पाने का ही प्रयास होता है। वर्तमान में एड्स रोग से निपटने के लिए हो रहा शोध मुख्यतः तीन महत्वपूर्ण अवधारणाओं पर केन्द्रित है -

- क्षतिग्रस्त प्रतिरक्षातंत्र को दुरुस्त करना,
- ऐसी औषधियों का विकास करना जो वायरस की वृद्धि को रोकें और अन्य संक्रमणों का उपचार कर सकें,
- इस रोग के लिए टीका तैयार करना।

तीनों दिशाओं में हो रहे प्रयासों में अभी तक किसी भी क्षेत्र में पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हुई है, क्योंकि प्रत्येक विधि में कुछ-न-कुछ जटिल समस्या है जिसका निराकरण अभी शेष है।

प्रतिरक्षा तंत्र को सुधारने और मज़बूत करने की दिशा में रक्त कैंसर की ही भांति अस्थि मज्जा बदलने का प्रयास भी किया गया किंतु वह कारगर सिद्ध नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त कुछ विशेष प्रकार के प्रोटीन लिम्फोकाइन्स का उपयोग किया गया जिनमें इन्टरफेरोन प्रमुख हैं। इनका इस्तेमाल एक प्रकार के त्वचा कैंसर युक्त एड्स के उपचार में किया गया है। अल्फा इन्टरफेरोन तथा इन्टरल्यूकिन से इस क्षेत्र में आंशिक सफलता मिली है।

औषधियों के रूप में एज़ीडो थाइमिडीन का उपयोग प्रारम्भिक वर्षों में किया गया था। इससे रोगी को कुछ अधिक समय तक जीवित रखने में तो सफलता मिली थी, किंतु इससे एनीमिया जैसे हानिकारक प्रभाव हुए थे।

एज़ीडो थाइमिडीन से मिलते-जुलते ज़ेल्सीटाबाइन से वायरस की वृद्धि और गुणन को रोकने में प्रायोगिक तौर पर

वर्ग पहेली 38 का हल

रा	म	से	तु		आ	का	र
मा			ला	इ	ला	ज	क
नु		कां			प	ढा	बा
ज	ल	च	र		र	म	ल
म			त	ल	वा		प्रा
	सं	ता	न		ह	री	ति	मा
नि	धि		जो			छ		णि
य		प	त	वा	र			क
म	शा	ल			क्षा	री	य	ता

सफलता मिली, किंतु रोगी के उपचार हेतु उपयोग में लाने पर यह औषधि विषैली पाई गई।

जापान के वैज्ञानिकों के अनुसार मुलैठी से प्राप्त होने वाला पदार्थ ग्लिसरेज़ीन हिपेटाइटिस के अलावा एच.आई.वी. की रोकथाम में कारगर है, किंतु इस औषधि का चिकित्सकीय परीक्षण अभी शेष है।

विषाणु जन्य रोगों की रोकथाम का सफलतम उपाय टीकाकरण है। मनुष्य को पोलियो, मम्स, चेचक, खसरा जैसी कई बीमारियों से टीकाकरण से ही मुक्ति मिली है, अतः एड्स की रोकथाम के लिए भी टीका बनाने के प्रयास समूचे विश्व में चल रहे हैं किंतु इसमें सबसे बड़ी कठिनाई इस वायरस की परिवर्तनशील अनुवांशिक संरचना है जिसके कारण टीका नहीं बन पा रहा है। इसके अलावा टीके के निर्माण के साथ कुछ सुरक्षा सम्बंधी प्रश्न भी जुड़े हुए हैं। टीकों का निर्माण सक्रिय वायरस से या क्षीण वायरस से किया जाता है जिनके परीक्षण मुश्किल हैं।

आज तक एड्स से बचाव के लिए कोई टीका उपलब्ध नहीं है किन्तु भविष्य में ऐसा टीका बन जाने पर भी कई सामाजिक समस्याएं उत्पन्न होंगी । जैसे, यह टीका किस आयु वर्ग के लिए होगा? क्या नौकरी आदि के लिए ऐसा टीका लगवाना अनिवार्य होगा? क्या यह सभी व्यक्तियों को लगाया जाएगा या केवल उन्हीं को जिनमें इस रोग की आशंका अधिक हो? ऐसे कई प्रश्न भविष्य में उठ सकते हैं।

एड्स जैसे संक्रामक रोग के निदान हेतु उपचार की अपेक्षा बचाव कारगर है। वैसे भी सूक्ष्मजीवों और वायरस को समाप्त करना मनुष्य के बूते में नहीं है। अतः सुरक्षात्मक उपाय ही श्रेष्ठ हैं। इसलिए बेहतर यही है कि सभी किशोर वय एवं वयस्क व्यक्तियों को एड्स के कारण, संक्रमण व बचाव की स्पष्ट जानकारी देना चाहिए। इस रोग से सम्बंधित भ्रमों का निवारण होना भी आवश्यक है।

हालांकि आज पूरे विश्व में शासकीय, गैर शासकीय तथा स्वयंसेवी संगठनों के माध्यम से एड्स की रोकथाम के उपायों से जन सामान्य को अवगत करवाया जा रहा है, फिर भी एड्स संक्रमित व्यक्तियों की संख्या तो अप्रत्याशित रूप में बढ़ती ही जा रही है। अतः जन शिक्षा के माध्यम से इसका नियंत्रण ज़रूरी है अन्यथा इसकी सज़ा सम्पूर्ण मानव जाति को भुगतना पड़ेगी। हमें एड्स वायरस की संरचना और संक्रमण के तरीके की पर्याप्त जानकारी है किंतु आज भी यह एक रहस्य ही है कि अचानक अस्सी के दशक में ये विषाणु कहां से प्रकट हो गए?

क्या ये वानर जाति या चिपैंज़ी से मनुष्य में पहुंचे? अफीक्री और अमेरिकी एड्स वायरस में अंतर पाया गया है। तो क्या दोनों का विकास अलग-अलग प्रकार से हुआ?

हालांकि कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों के मतानुसार लगभग 30 लाख साल पहले चिंपैंज़ी एड्स जैसे वायरस की चपेट में आए थे किंतु उनका अनुवांशिक तंत्र इनसे निपटने में सक्षम हो गया था। इसका मतलब यह हुआ कि चिंपैंज़ी से मानव में इस रोग के पहुंचने की संभावना तो बहुत कम है। इस प्रकार के कई प्रश्न इस रोग और इसके निदान में अभी भी अनुत्तरित हैं। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

वार्षिक सदस्यता 150 रुपए
द्वैवार्षिक सदस्यता 275 रुपए
त्रैवार्षिक सदस्यता 400 रुपए

सदस्यता शुल्क एकलव्य, भोपाल के नाम ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से

एकलव्य, ई-10 शंकर नगर भोपाल (म.प्र.) 462 016

के पते पर भेजें।